Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2025 E-Journal, Volume I, Issue XLIX, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्राचीन भारतीय प्रतिरक्षा एवं सैन्य संगठन व युद्ध में नैतिक नियमों की उपयोगिता वर्तमान संदर्भ में

डॉ. जे.के.संत*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – रणक्षेत्र में युद्ध किस प्रकार करना चाहिए इस विषय में मनु ने व्यवस्था दी है –राजा को रणस्थल में चाहिए कि वह सेना को टोलियों अथवा जत्थों में आवश्यकता अनुसार विभाजित कर दें। इन जत्थों के अलग–अलग नायकों को नियुक्त उन्हें विभिन्न दिशाओं में स्थापित कर देना चाहिए। इन टोलियों के अलग–अलग नाम रख देना चाहिए जिससे कि उन्हें सुविध पूर्वक संबोधित किया जा सके और युद्ध के लिए आदेश दिया जा सके। यदि सेना अल्प हो तो सेहत युद्ध करना चाहिए और यदि विशाल हो तो उन्हें फैल –फुटकर युद्ध करने का आदेश देना चाहिए। मनु ने व्यूह रचना करके युद्ध करना श्रेयस्कर माना है।(महाभारत में पांडव कौरव के बीच व्यूह रचना करके ही युद्ध में अभिमन्यु को मारा गया था) इसीलिए उनके निर्देश है कि समय और परिस्थिति के अनुसार सूची या वज्र व्यूह बनाकर रणस्थल में युद्ध करना चाहिए। कुशलता पूर्वक युद्ध के लिए इन व्यहों की रचना का समर्थन महाभारत कार, कौटिल्य, कामन्दक आदि के ग्रंथों में भी किया गया है।[1]

युद्ध संचालन के विषय में मनु का आगे कथन है की समभूमि में रथारोहियों तथा अश्वारोहियों से पानी युक्त स्थानों पर नागारोहियों अथवा नौकारोहियों से और वृक्षों,झाड़ियों एवं कंटक वाले स्थलों में धनुर्धारियों एवं खंगचर्मधारण करने वाले सैनिकों को युद्ध में लगाना चाहिए। [2]

मानव धर्मशास्त्रकार ने अपने समय में कुछ ऐसे भू–भागों के नाम भी दिए हैं जहां के सैनिक विशेष कर वीर पुरुष माने जाते हैं। यह भूभाग कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पांचाल और शुरसेन है। मनु यह आदेश देते हैं कि इस भूभाग में उत्पन्न योद्धाओं को सेना के अग्रभाग में रखना चाहिए। इन योद्धाओं को उत्साहित करते रहना चाहिए। इनकी हर समय जांच करते रहना चाहिए और इनकी चेष्ठाओं से परिस्थिति का बोध करते रहना चाहिए। इस प्रकार युद्ध संचालन के विषय में धर्मशास्त्र कारों के विचार महत्वपूर्ण है और जिनके व्यावहारिक रूप से आज भी इनकार नहीं किया जा सकता है।

शत्रु को निर्बल बनाने की नीति–शत्रु को निर्बल बनाने के लिए कर्षण एवं उत्पीड़न की नीति का आश्रय लेना चाहिए। इस विषय में मनु का कथन है कि शत्रु के राष्ट्र को घेर कर, उसका उत्पीड़न करना चाहिए। शत्रु के घास, अन्न, जल और ईंधन आदि को भी नष्ट कर देना चाहिए। राष्ट्र के जलाशयों, नगर के दीवारों एवं परिखाओं को भी नष्ट कर देना चाहिए। रात्रि के समय में शत्रु राष्ट्र को विशेष रूप से त्रस्त करना चाहिए।[3] अन्य आचार्यों के मत का प्रतिपादन करते हुए कर्षण के प्रति कामन्दक का यह मत है कि राजा को कोष और दंड से रहित कर देना चाहिए और प्रधानमंत्री का वध करवा देना चाहिए।

युद्ध के नैतिक नियम – शास्त्रों में धर्म युद्ध के कतिपय नियमों का उल्लेख किया गया है। मनु युद्ध को वीरता प्रदर्शन संबंधी कृत्य मानते हैं। मनु ने छल कपट द्वारा योद्धा के वध की भर्त्सना की है। उन्होंने कुछ ऐसी परिस्थितियों का उल्लेख किया है जिसमें मानव का युद्ध स्थल में वध नहीं करना चाहिए। यदि हम गंभीरता पूर्वक इन परिस्थितियों की विवेचना करें तो कुछ सिद्धांत हमारे सम्मुख उपस्थित होते हैं जो इस प्रकार हैं –

(1) आयुध अथवा वहान विहीन शत्रु को मारना धर्म विरुद्ध है–आयुध अथवा वहां के अभाव के कारण जो व्यक्ति युद्ध करने में किसी प्रकार असमर्थ है, ऐसे व्यक्ति की असमर्थता का लाभ उठाकर उसका वध कर देना धर्मयुद्ध के विरुद्ध है। इस सिद्धांत की स्थापना में मनु ने कुछ उदाहरण दिए हैं , जो देखने योग्य हैं– भूमि पर स्थित (वाहन विहीन) व्यक्ति का वध नहीं करना चाहिए।आयुध रहित अथवा टूटे हुए आयुध वाले भीत अथवा व्रणयुक्त पुरुष का रणभूमि में वध नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार वह पुरुष जो कवच रहित या नग्न है, उसका भी वध नहीं होना चाहिए।

(2) अपने विपक्षी अथवा शत्रु को सचेत करके युद्ध करना चाहिए–जो व्यक्ति असावधान अथवा युद्ध क्षेत्र में अचेत है, उनसे युद्ध नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति रणक्षेत्र में अचेत हो एवं दूसरे से युद्ध में संलग्न होने के कारण असावधान हो उसका वध किया जाना धर्मयुद्ध के नियमों का उल्लंघन माना जाएगा। इस सिद्धांत के समर्थन में धर्मशास्त्रकारों का आदेश है कि सोते हुए, दूसरे से युद्ध में संलग्न अथवा भूमि पर बैठे हुए पुरुष का वध नहीं करना चाहिए।

(3) युद्ध न करने वाले का वध नहीं करना चाहिए– इस सिद्धांत में मनु का आदेश है कि जो व्यक्ति युद्ध नहीं कर रहा है केवल दर्शक है उसका वध नहीं करना चाहिए। [4]

(4) पराजय स्वीकार करने वाला व्यक्ति भी अवध्य होता है– इस सिद्धांत का उल्लेख करते हुये मानव धर्मशास्त्र कारों ने कहा है कि जिस व्यक्ति ने रणस्थल में अपनी पराजय स्वीकार कर ली है और विजेता योद्धा की शरण ग्रहण कर ली है तो ऐसा व्यक्ति अवध्य है अर्थात रणस्थल में हाथ जोड़े हुए,सिर के बाल खोले हुए, मैं तुम्हारा हूं ऐसा कहने वाले का वध नहीं करना चाहिए।

(5)पुरुषत्व विहीन व्यक्ति से युद्ध नहीं करना चाहिए– इस सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए रण–स्थल में नपुंसक के वध किए जाने का निषेध

किया गया है (इसी लिए महाभारत में श्रीखंडी का वध नहीं किया गया था)।

(6) भयाक्रान्त व्यक्ति का वध नहीं होना चाहिए– जो व्यक्ति युद्ध नहीं करना चाहता युद्ध से डर कर अथवा घबराकर भागना चाहता है ऐसे व्यक्ति का वध नहीं किया जाना चाहिए।

(7) निर्मम एवं क्रूर अस्त्रों का प्रयोग नहीं करना चाहिए– धर्म युद्ध के अंतिम सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए मनु का कथन है कि शत्रु का वध ऐसे आयुधों से नहीं करना चाहिए,जिसके प्रयोग से मनुष्य को विशेष पीड़ा पहुंचती है और जिनका प्रयोग क्रूरताऔरनृशंसता प्रदर्शन हेतु किया जाता है। इसी सिद्धांत के दृष्टि को ध्यान में रखकर उन्होंने क्रूर आयुधों, कर्णी (जो वाण विधकर कठिनाई से निकाले जा सकें) विष आदि से बुझाए गए तथा प्रज्वलित अग्नि युक्त अस्त्र–शस्त्रों के प्रयोग का सर्वथा निषेध किया है । क्योंकि ऐसे शास्त्रों के प्रयोग से वीरता का विशेष प्रदर्शन नहीं हो पता है बल्कि क्रूरता एवं नृशंसता का ही प्रदर्शन होता है। इस प्रकार शास्त्रकारों ने युद्ध में छल कपट ढूंढता का आश्रय लेकर शत्रु का क्रूरता एवं नृशंसता पूर्वक वध करना उचित नहीं माना है। वीरता प्रदर्शन करते हुए नियमानुसार शत्रु का पराजय करना तथा मनु के मतानुसार धर्म युक्त है इस प्रकार धर्म युद्ध नियमों की चर्चा आवस्तबधर्मसूत्र याज्ञवल्क्य स्मृति रामायण महाभारत शुक्र नीति आदि गन्थों में भी पाई जाती है। [5] गौतम ऋषि का कहना है कि जिन्होंने अश्व सारथी आयुध खो दिये हो, जिन्होंने हाथ जोड़ लिये हो, जिनके केश भागते–भागते बिखर गए हो जिन्होंने पीठ दिखा दी हो जो भूमि पर बैठ गए हो जो भाग कर वृक्ष पर चढ़ गए हो, जो दूत हो जो गाय या ब्राह्मण हो इनको छोड़कर किसी अन्य को समरांगण में मारना या घायल करना पाप नहीं है। [6] बौधायन धर्म सूत्र ने विषाक्त बाणों कर्णियों से मारना निसिद्ध माना है।[7] यही बात शांतिपर्व में भी कही गई है।

वर्तमान संदर्भ में अनुकरणीय – प्राचीन भारतीय राज्यशास्त्रीय चिंतन का नवमूल्यांकन करते समय हम देखते हैं कि प्राचीन भारतीय संस्थायें तथा उनका संगठन अत्यधिक प्रभावशाली था। प्रतिरक्षा व्यवस्था एवं सेना का संगठित स्वरूप आज के संगठित संदर्भ में भी उतना ही उपयोगी है जितना पहले था। सेना के प्रकार उनके अलग–अलग चिन्ह, सेना के अधिकारियों की दक्षता, युद्ध का उचित समय, व्यूह बनाकर सेना का आगे बढ़ाना इत्यादि बातें आदि भी बहुत कुछ बातें सिखाती हैं। युद्ध के नैतिक तरीकों को ही उचित माना है। विजयी राजा का पराजित राजा के प्रति सम्मानित कर्तव्य की भावना अनुकरणीय तथ्य है। इसी आधार पर भी राम ने सुग्रीव तथा विभीषण को जीता हुआ राज्य लौटा दिया था। अपनी अधीनता में नहीं रखा था। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के समय ताशकंद समझौता के अंतर्गत भी ऐसा ही किया गया था। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि इस समय भी विश्व प्राचीन भारतीय राज्य शास्त्रियों का ऋणी है। एक बात अधिक ध्यान देने योग्य है कि युद्ध के समय राजा स्वयं युद्ध क्षेत्र में आगे रहता था। आज भी सेनापतियों तथा शासको को गंभीरता से इस पर विचार करना चाहिए।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि भारतीय वांगमय में इस बात पर जोर दिया गया है कि पराजित राजा के राज्य का अपहरण नहीं किया जाना चाहिए, वरन उसकी शक्ति को सीमित कर उसको अपना मित्र बना लेना ही श्रेयस्कर होता है। और इसी में विजयी और विजित दोनों राज्यों का कल्याण निहित है। इस पर विशेष प्रकाश डालते हुए आचार्य कौटिल्य ने विजयी राजा को विशेष सावधानी बरतने का सुझाव दिया है। कौटिल्य के अनुसार विजेता राजा को अपने धर्म, प्रजा पर अनुग्रह करो कि मुक्ति, दान और प्रजा के कल्याण हेतु कार्यों द्वारा विजित प्रजा को प्रसन्न करना चाहिए।[8] जिस व्यक्ति ने अपने राजा के निमित्ता विशेष परिश्रम किया है, उसको विशेष अधिकार एवं धन देना चाहिए। विजेता राजा को अपने नवीन राज्य की प्रजा के अनुकूल ही वेशभूषा, भाषा एवं आचरण करना चाहिए। वहां के देवता, समाज, उत्सव, विहार आदि के प्रति भक्ति प्रदर्शित करनी चाहिए।[9] ईसवी चौथी से दसवीं शताब्दी तक इस सिद्धांत का बहुत अधिक पालन किया जाता था। गुप्त राजवंश के महान सम्राट समुद्रगुप्त का प्रयाग में जो स्तंभाभिलेख है उसमें भी यही सूचित होता है, कि उस समय इस सिद्धांत का पूरा अनुसरण किया गया था। कालिदास ने भी इस प्रथा का उल्लेख किया है, इलियट और डाउसन ने भी इसका उल्लेख किया है। प्रतिरक्षा व्यवस्था एवं सेना का संगठित स्वरूप आज के संगठित संदर्भ में भी उतना ही उपयोगी है, जितना पहले था। हम यह कह सकते हैं कि इस समय भी विश्व प्राचीन भारतीय राज्य शास्त्रियों का ऋणी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्थ0 10/6, द्रोर्णापर्व 75/27, 87/22–24, कर्णपर्व 11/14 व 29, कामन्दकीय, 19/40–55, अग्निपु0, 242/7–8
2. मनु 07/192
3. रेचंन कोशदण्डाभ्यां महामात्य वधस्त्था।
   एतत्कर्षण मित्या छुराचार्या: पीड़नम।। कामन्दकीय 08/58
4. नायुद्धमानं पश्यतं।। मनु0, 7/92 उत्तरार्ध, प्रथम–द्वितीय शब्द
5. आपस्तम्ब0 2/5/10/12 महाभारत, भीष्मपर्व 1/27–32 यज्ञ 01/326
6. गौतम0, 10/17–18
7. बौधायन धर्मसूत्र, 1/10/10, अर्थ0 13/4 में भी इन नियमों का उल्लेख पाया जाता है।
8. स्वर्ध कर्मानुग्रह परिरदामान कर्मभिश्च प्रकृति प्रिय हितान्यनवर्तेत 13/5
9. तस्मात्समान शील वेषभाषा चारतामुपगच्छेत
   देशदैवतसमाजोत्सव विहारेषु च भक्तिमनुवर्तेत।। अर्थ0 13/5

****